कर्नाटक राज्य

बनाम

अमीर जैन

सितम्बर 18, 2007

[न्यायमूर्ति एस.बी. सिन्हा और हरजीत सिंह बेदी]

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988:

धारा 19, 7, 13(1) (डी) आर/ डब्ल्यू 13(2)- लोक सेवक के खिलाफ मुकदमा चलाने की मंजूरी- मंजूरी देने वाले प्राधिकारी ने केवल आईजी पुलिस द्वारा की गई रिपोर्ट के आधार पर मंजूरी का आदेश पारित किया- उक्त रिपोर्ट रिकॉर्ड पर नहीं लाई गई- माना गया: मंजूरी के आदेश ने मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की ओर से उचित विवेक का प्रदर्शन नहीं किया - इसलिए, उच्च न्यायालय ने मंजूरी के आदेश को अवैध मानने और उस आधार पर संबंधित लोक सेवक की सजा को रद्द करने को उचित ठहराया।

प्रत्यर्थी फर्म और सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार के कार्यालय में सहायक के रूप में कार्यरत था। उसने कथित तौर पर पीडब्ल्यू 3 से 300/- रुपये की रिश्वत की मांग की, जिसने एक प्रमाण पत्र देने के लिए उससे संपर्क किया था। उक्त अधिनियम की धारा 7, 13(1) (डी) के साथ पठित 13(2) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए प्रत्यर्थी के खिलाफ मुकदमा

चलाने के लिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 19 के तहत मंजूरी का आदेश जारी किया गया था। मंजूरी आदेश पूरी तरह से पुलिस महानिरीक्षक द्वारा जारी कथित रिपोर्ट के आधार पर जारी किया गया था। मंजूरी देने वाले प्राधिकारी ने ट्रायल कोर्ट के समक्ष पीडब्लू-8 के रूप में खुद की जांच की। हालाँकि, उन्होंने पुलिस महानिरीक्षक की रिपोर्ट पेश नहीं की और अन्यथा भी इसे रिकॉर्ड पर नहीं लाया गया। ट्रायल कोर्ट ने प्रत्यर्थी को दोषी ठहराया। हालाँकि, उच्च न्यायालय ने माना कि मंजूरी का आदेश अवैध था और उस आधार पर प्रत्यर्थी की दोषसिद्धि को रद्द कर दिया। इसलिए वर्तमान अपील।

कोर्ट ने अपील खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया-

1. मंजूरी के आदेश को पांडित्यपूर्ण तरीके से नहीं समझा जाना चाहिए। लेकिन, यह भी अच्छी तरह से तय है कि जिस उद्देश्य के लिए मंजूरी का आदेश पारित करना आवश्यक है, उसे हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। आम तौर पर, मंजूरी देने वाला प्राधिकारी यह निर्णय करने के लिए सबसे अच्छा व्यक्ति होता है कि संबंधित लोक सेवक को इनकार करने पर अधिनियम के तहत सुरक्षा प्राप्त करनी चाहिए या नहीं।

उसके अभियोजन के लिए एक समझौते की मंजूरी या नहीं. उपरोक्त उद्देश्य के लिए, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की ओर से दिमाग का प्रयोग अनिवार्य है। मंजूरी देने वाला आदेश इस तथ्य का प्रदर्शन करने वाला होना

चाहिए कि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की ओर से दिमाग का उचित प्रयोग किया गया है। [पैरा 7 और 8] [1108- एफ, जी, एच]

2.1. वर्तमान मामले में, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी ने केवल पुलिस महानिरीक्षक, कर्नाटक लोकायुक्त द्वारा की गई रिपोर्ट के आधार पर मंजूरी का आदेश पारित करने का आरोप लगाया था। उक्त रिपोर्ट को रिकार्ड में नहीं लाया गया है। इस प्रकार, चाहे उक्त रिपोर्ट में, या तो उसके मुख्य भाग में या उसके साथ संबंधित दस्तावेजों को संलग्न करके, आईजी पुलिस कर्नाटक सी लोकायुक्त ने मामले की जांच पर एकत्र की गई सामग्रियों को रिकॉर्ड पर रखा था, जो प्रथम दृष्टया इस संबंध में साक्ष्य के अस्तित्व को स्थापित करेगा। संबंधित लोक सेवक द्वारा अपराध किया जाना स्पष्ट नहीं है।

2.2. हाईकोर्ट ने मूल रिकार्ड तलब किया और यह पाया गया कि पुलिस महानिरीक्षक, कर्नाटक लोकायुक्त की रिपोर्ट के अलावा, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के समक्ष कोई अन्य रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं कराया गया था। मंजूरी आदेश में भी यही कहा गया है। मंजूरी देने वाले प्राधिकारी पीडब्लू-8 के पास भी कथित रिपोर्ट को छोड़कर रिकॉर्ड पर विचार करने का अवसर नहीं था। इसलिए, उच्च न्यायालय का निर्णय किसी भी कानूनी कमज़ोरी से ग्रस्त नहीं है। [पैरा 15 और 16] [1112- ई, एफ, जीजे

प्रकाश सिंह बादल और अन्य. बनाम पंजाब राज्य और अन्य,

[2007] 1 एससीसी 1, प्रभेद किया गया।

गोकुलचंद द्वारकादास मोरारका बनाम द किंग, एआईआर (1948) पीसी 82; जसवन्त सिंह बनाम पंजाब राज्य, एआईआर (1958) एससी 124; मो. इकबाल अहमद बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, [1979] 4 एससीसी 172; आर.एस. नायक बनाम ए.आर. अंतुले, [1984] 2 एससीसी 183; मनसुखलाल विट्ठलदास चौहान बनाम गुजरात राज्य, [1997] 7 एससीसी 622 और शंकरन मोइत्रा बनाम साधना दास एवं अन्य, [2006] 4 एससीसी 584, का उल्लेख किया गया है।

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: आपराधिक अपील संख्या 766/2001

(1995 की आपराधिक अपील संख्या 222 में बैंगलोर में कर्नाटक उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 19.06.2000 से।)

श्री संजय आर. हेज और रमेश एस. जाधव - अपीलकर्ता की ओर से

संजय पारिख,ए.एम. सिंह और जितिन साहनी - प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय एस.बी. सिन्हा, न्यायमूर्ति द्वारा सुनाया गया-

इस अपील में धारा 19 भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (संक्षेप

में "अधिनियम") की धारा 19 के प्रावधानों को लागू करने अेार व्याख्या पर विचार किया जाना है, जो कर्नाटक उच्च न्यायालय, बैंगलोर के द्वारा आपराधिक अपील नं. 222/1995 में पारित किये गये निर्णय व आदेश दिनांक 19-06-2000 से उत्पन्न हुआ है।

2. यहां प्रत्यर्थीफर्म और सहकारी समितियों के रजिस्ट्रार के कार्यालय में द्वितीय श्रेणी सहायक के रूप में कार्यरत था। डी.वी. त्रिलोचना (पीडब्लू-3) ने एक प्रमाण पत्र देने के लिए उनसे संपर्क किया। उन्होंने

कथित तौर पर 300/- रुपये की मांग की। उस पर अधिनियम की धारा 7, 13(1) (डी) सपठित धारा 13(2) के तहत कथित अपराध करने के लिए मुकदमा चलाया गया था।

3. स्टांप आयुक्त द्वारा मंजूरी का आदेश केवल पुलिस महानिरीक्षक, कर्नाटक लोकायुक्त द्वारा जारी कथित रिपोर्ट पर भरोसा करते हुए या उसके आधार पर जारी किया गया था। मंजूरी का कथित

आदेश दिनांक 20.07.1992 इस प्रकार है:

> "भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 19(1) (सी) के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, मैं रजिस्ट्रार ऑफ फर्म्स एंड सोसाइटीज, बैंगलोर के कार्यालय में द्वितीय श्रेणी सहायक श्री अमीरजान के खिलाफ सक्षम न्यायालय में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7 और

13(1) (डी) के साथ पठित 13(2) के तहत दंडनीय अपराधों के लिए शहरी जिला, बैंगलोर में मुकदमा चलाने की मंजूरी देता हूं।"

4. मंजूरी देने वाले प्राधिकारी ने विद्वान ट्रायल जज के समक्ष स्वयं को पी.डब्लयू. 8 के रूप में परीक्षित करवाया। हालाँकि, उन्होंने कर्नाटक लोकायुक्त के पुलिस महानिरीक्षक की रिपोर्ट पेश नहीं की। अन्यथा भी इसे रिकार्ड पर नहीं लाया गया। अभियोजन पक्ष द्वारा रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्रियों पर विचार करने के बाद विद्वान ट्रायल जज ने राय दी कि प्रत्यर्थी उक्त अपराध के लिए दोषी था। हालाँकि, आक्षेपित निर्णय के कारण, उच्च न्यायालय ने उसी राय को उलट दिया कि मंजूरी का आदेश अवैध होने के कारण, दोषसिद्धि के निर्णय को कायम नहीं रखा जा सकता है।

5. कर्नाटक राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री संजय आर. हेगड़े ने इस अपील के समर्थन में प्रस्तुत किया कि किसी मंजूरी के आदेश का अर्थ पांडित्यपूर्ण ढंग से नहीं लगाया जाना चाहिए। विद्वान वकील ने आग्रह किया कि उच्च न्यायालय ने एक अप्रासंगिक कारक के संबंध में मंजूरी के आदेश की वैधता या वैधता निर्धारित करने के लिए आगे बढ़ने में एक स्पष्ट त्रुटि की है अर्थात अपराध में केवल 300/- रुपये की राशि शामिल है। विशेष रूप से, उच्च न्यायालय के निम्नलिखित

निष्कर्षों की यह कहते हुए आलोचना की गई कि ये सही कानूनी स्थिति निर्धारित नहीं करते हैं:

> "....इस दृष्टिकोण का अतिरिक्त कारण यह है कि कानून का एक पूरी तरह से अलग पहलू है जो इस श्रेणी के मामलों पर लागू होता है क्योंकि अदालतों ने अब यह माना है कि यदि यह एकल पृथक उदाहरण है तो इसमें शामिल राशि अपेक्षाकृत छोटी है और आदतन रिश्वत लेने या आय के ज्ञात स्रोतों से अधिक संपत्ति की कोई साक्ष्य नहीं है, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी को सावधानीपूर्वक मूल्यांकन करना होगा कि क्या अनुशासनात्मक कार्रवाई करने से न्याय का हित पर्याप्त रूप से पूरा नहीं होगा। अपेक्षाकृत तुच्छ तथ्यों के मामले में अदालतों पर पूर्ण अभियोजन का बोझ डालना। ये सभी गहन मूल्यांकन के क्षेत्र हैं, जिन्हें जिन्हें अभिलेखों के उचित अवलोकन के माध्यम से ही सही मायने में उचित ठहराया जा सकता है। मैं विद्वान लोक अभियोजक द्वारा प्रस्तुत इस दलील को स्वीकार करने में असमर्थ हूं कि अभिलेखों की प्राप्ति का संदर्भ मंजूरी आदेश में बुनियादी कमजोरी को दूर करने के लिए पर्याप्त है, जिसमें प्राधिकारी यह बताने में तत्पर है कि उसने केवल

पुलिस महानिरीक्षक के पत्र के आधार पर कार्य किया..."

6. हालांकि, प्रत्यर्थीकी ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री संजय पारिख का कहना है कि मंजूरी का कथित आदेश दिनांक 20.07.1992 प्रथम दृष्टया पीडब्लू-8 की ओर से दिमाग का पूरी तरह से प्रयोग न करना दर्शाता है और इस प्रकार आक्षेपित निर्णय अखंडनीय है।

7. हम इस बात से सहमत हैं कि मंजूरी के आदेश को पांडित्यपूर्ण तरीके से नहीं समझा जाना चाहिए। लेकिन, यह भी अच्छी तरह से तय है कि जिस उद्देश्य के लिए मंजूरी का आदेश पारित करना आवश्यक है, उसे हमेशा ध्यान में रखना चाहिए। आम तौर पर, मंजूरी देने वाला प्राधिकारी यह निर्णय करने के लिए सबसे अच्छा व्यक्ति होता है कि संबंधित लोक सेवक को उसके अभियोजन के लिए मंजूरी देने से इनकार करके अधिनियम के तहत सुरक्षा प्राप्त करनी चाहिए या नहीं।

8. उपरोक्त उद्देश्य के लिए, निस्संदेह, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की ओर से दिमाग का प्रयोग अनिवार्य है। मंजूरी देने वाला आदेश इस तथ्य का प्रदर्शन करने वाला होना चाहिए कि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की ओर से एच दिमाग का उचित उपयोग किया गया था। हमने यहां पहले भी गौर किया है। मंजूरी देने वाले प्राधिकारी ने केवल पुलिस महानिरीक्षक, कर्नाटक लोकायुक्त द्वारा की गई रिपोर्ट के आधार पर मंजूरी का आदेश पारित करने का इरादा किया था। यहां तक कि उक्त रिपोर्ट को भी रिकॉर्ड पर हीं

लाया गया है. इस प्रकार, चाहे उक्त रिपोर्ट में, या तो उसके मुख्य भाग में या उसके साथ संबंधित दस्तावेजों को संलग्न करके, आईजी पुलिस कर्नाटक लोकायुक्त ने मामले की जांच पर एकत्र की गई सामग्रियों को रिकॉर्ड पर रखा था जो प्रथम दृष्टया आयोग के संबंध में साक्ष्य के अस्तित्व को स्थापित करेगा। संबंधित लोक सेवक द्वारा किया गया अपराध स्पष्ट नहीं है। आमतौर पर, मंजूरी का आदेश पारित करने से पहले, आरोपी के खिलाफ एकत्र की गई सामग्री वाले पूरे रिकॉर्ड को मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के समक्ष रखा जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में, मंजूरी का आदेश दिमाग के प्रयोग का संकेत नहीं देता है क्योंकि मंजूरी का आदेश पारित होने से पहले उक्त प्राधिकारी के समक्ष रखी गई सामग्री को यह दिखाने के लिए अदालत के समक्ष पेश किया जा सकता है कि ऐसी सामग्री वास्तव में उत्पादित की गई थी।

9. प्रिवी काउंसिल ने 1948 में गोकुलचंद द्वारकादास मोरारका बनाम द किंग, एआईआर (1948) पीसी 82 में राय दी थी कि मंजूरी के प्रावधान का उद्देश्य यह है कि इसे देने वाले प्राधिकारी को इस निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले साक्ष्य पर विचार करने में सक्षम होना चाहिए। है कि इन परिस्थितियों में अभियोजन को मंजूरी दी जानी चाहिए या मना किया जाना चाहिए:

"उनके आधिपत्य के विचार में, खंड 23 के प्रावधानों का

अनुपालन करने के लिए यह साबित किया जाना चाहिए कि आरोप लगाए गए अपराध के तथ्यों के संबंध में मंजूरी दी गई थी। यह स्पष्ट रूप से वांछनीय है कि तथ्यों को सामने से संदर्भित किया जाना चाहिए, लेकिन यह आवश्यक नहीं है, क्योंकि खंड 23 के अनुसार मंजूरी को किसी विशेष रूप में होने की आवश्यकता नहीं है, न ही लिखित रूप में होना अनिवार्य है। लेकिन यदि आरोप लगाए गए अपराध के तथ्य मंजूरी के चेहरे पर नहीं दिखाए जाते हैं, तो अभियोजन पक्ष को बाहरी साक्ष्यों से साबित करना होगा कि उन तथ्यों को मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के समक्ष रखा गया था। मुकदमा चलाने की मंजूरी एक महत्वपूर्ण मामला है; यह अभियोजन चलाने के लिए पूर्ववर्ती शर्त है और सरकार के पास मंजूरी देने या रोकने का पूर्ण विवेक है।"

उक्त निर्णय को इस न्यायालय द्वारा अनुमोदन के साथ जी जसवन्त सिंह बनाम पंजाब राज्य, एआईआर (1958) एससी 124 में संदर्भित किया गया है।

10. एक बार फिर मोहम्मद में. इकबाल अहमद बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, [1979] 4 एससीसी 172, इस न्यायालय ने राय दी कि मंजूरी देने वाला प्राधिकारी द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 की धारा 4 में

निहित वैधानिक अनुमान पर भरोसा नहीं किया जा सकता।

> "...पहली बात तो यह है कि मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के पास अनुमान उपलब्ध होने का कोई सवाल ही नहीं है क्योंकि उस स्तर पर अनुमान लगाने का अवसर कभी नहीं उठता क्योंकि अदालत में कोई मामला नहीं है। दूसरे, अनुमान स्वचालित रूप से उत्पन्न नहीं होता है लेकिन केवल कुछ परिस्थितियों के सबूत पर, यानी, जहां अदालत में सबूतों से यह साबित हो जाता है कि आरोपी को भुगतान किया गया पैसा वास्तव में उसके कब्जे से बरामद किया गया था। केवल तभी अदालत यह मान सकती है कि प्राप्त राशि को अवैध परितोषण माना जाएगा। जहां तक मंजूरी का सवाल है, यह कार्यवाही अदालत में आने से पहले उठता है और इसलिए, इस स्तर पर अनुमान लगाने का सवाल ही नहीं उठता..."

11. आर.एस. में नायक बनाम ए.आर. अंतुले, [1984] 2 एससीसी 183 मोहम्मद के बाद इकबाल अहमद (सुप्रा), इस न्यायालय ने आयोजित किया कि-

> "...विधानमंडल ने सलाह दी है कि लोक सेवक को पद से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी को स्पष्ट कारण के मंजूरी

देने की शक्ति प्रदान की जाए, क्योंकि प्राधिकारी अकेले ही सक्षम होगा, जब तथ्य और सबूत उसके सामने रखे जाएंगे कि क्या कोई गंभीर अपराध किया गया है या अभियोजन तुच्छ या काल्पनिक है। वह प्राधिकारी अकेले ही यह निर्णय करने में सक्षम होगा कि कथित तथ्यों के आधार पर, लोक सेवक द्वारा पद का दुरुपयोग किया गया है। वह प्राधिकारी यह जानने की स्थिति में होगा कि क्या क्या लोक सेवक द्वारा धारण किए गए पद को प्रदत्त शक्ति थी, भ्रष्ट उद्देश्य के लिए उस शक्ति का दुरुपयोग कैसे किया जा सकता है और क्या प्रथम दृष्टया ऐसा किया गया है। वह सक्षम प्राधिकारी ही पद धारण करने वाले लोक सेवक द्वारा निर्वहन की प्रकृति और कार्यों को जान सकेगा और क्या इसका दुरुपयोग या दुरुपयोग किया गया है। यह लोक सेवक को उस कार्यालय से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी और लोक सेवक द्वारा आयोजित कार्यालय की प्रकृति के बीच ऊर्ध्वाधर पदानुक्रम है जिसके खिलाफ मंजूरी मांगी गई है जो एक पदानुक्रम का संकेत देगा और जो इसलिए, कार्यालय के कार्यों और कर्तव्यों और लोक सेवक द्वारा इसके दुरुपयोग या दुरुपयोग के बारे में ज्ञान का अनुमान लगाने की अनुमति होगी। इसीलिए विधानमंडल ने स्पष्ट

रूप से प्रावधान किया कि केवल वही प्राधिकारी मंजूरी देने में सक्षम होगा जो उस लोक सेवक को पद से हटाने का हकदार है जिसके खिलाफ कार्यालय से मंजूरी मांगी गई है।"

12. मनसुखलाल विट्ठलदास चौहान बनाम गुजरात राज्य में, [1997] 7 एससीसी 622, इस न्यायालय ने आयोजित किया:"14. धारा 6 के अवलोकन से, ऐसा प्रतीत होता है कि केंद्र या राज्य सरकार या किसी अन्य प्राधिकारी (लोक सेवक की श्रेणी के आधार पर) को प्रत्येक मामले के तथ्यों पर विचार करने और यह निर्णय लेने का अधिकार है कि क्या " लोक सेवक" पर मुकदमा चलाया जाना चाहिए या नहीं। चूंकि धारा स्पष्ट रूप से अदालतों को उसमें निर्दिष्ट अपराधों का संज्ञान लेने से रोकती है, इसमें परिकल्पना की गई है कि केंद्र या राज्य सरकार या "अन्य प्राधिकारी" को न केवल प्रश्न पर विचार करने का अधिकार है मंजूरी देने के मामले में, उसे मंजूरी देने या न देने का भी विवेकाधिकार है।"

[स्टेट आफ टी.एन. बनाम एम.एम. राजेंद्रन, [1998] 9 एससीसी 268] भी देखें।

13. हालाँकि, हमारा ध्यान प्रकाश सिंह बादल और अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य, [2007] 1 एससीसी 1 मामले में इस न्यायालय के एक हालिया फैसले की ओर आकर्षित हुआ। श्री हेगड़े द्वारा यह तर्क देने के लिए कि अधिनियम की धारा 19 की उपधारा (3) और (4) को

ध्यान में रखते हुए, केवल इसलिए कि मंजूरी के आदेश में कुछ शामिल हैं अनियमितताओं के मामले में, अदालत दोषसिद्धि के आदेश को रद्द नहीं करेगी। प्रकाश सिंह बादल (सुप्रा) मामले में, इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए जो प्रश्न उठा, वह यह था कि क्या किसी ऐसे आरोपी के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत मंजूरी का आदेश पारित करना आवश्यक है, जो कि अब लोक सेवक नहीं है। इसी संदर्भ में इस न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उठा कि क्या पद के तहत किया गया कथित कार्य अधिकारी के लाभ के लिए है या उसकी अपनी खुशी के लिए है। इस प्रश्न के संदर्भ में कि क्या संबंधित लोक सेवक को निरंतर सुरक्षा मिलनी चाहिए, यह राय दी गई थी:

> "29. अधिनियम की धारा 19 की उप- धारा (3) और (4) का प्रभाव काफी महत्वपूर्ण है। उप- धारा (3) में "न्याय की विफलता" पर जोर दिया गया है और वह न्यायालय की भी "राय है। उप- धारा (4) में, उचित समय पर दलील लेने के लिए जोर दिया गया है। गौरतलब है कि, "न्याय की विफलता" मंजूरी में त्रुटि, चूक या अनियमितता से संबंधित है। इसलिए, मात्र त्रुटि, मंजूरी में चूक या अनियमितता तब तक घातक नहीं मानी जाती जब तक कि इसके परिणामस्वरूप न्याय में विफलता न हुई हो या ऐसा न हुआ

हो। धारा 19(1) प्रक्रिया का मामला है और अधिकार क्षेत्र की जड़ तक नहीं जाती है जैसा कि पैरा 95 में देखा गया है नरसिम्हा राव मामले में 2. धारा 19 की उपधारा (3) (सी) निषेध की कठोरता को कम करती है। पुराने अधिनियम की धारा 6(2) में [अधिनियम की धारा 19(2)] मंजूरी देने अधिकार के बारे में संदेह से संबंधित प्रश्न है कि मंजूरी आवश्यक है या नहीं।

प्रकाश सिंह बादल (सुप्रा), इसलिए, इस प्रस्ताव के लिए प्राधिकारी नहीं हैं कि भले ही मंजूरी के आदेश को अन्य बातों के साथ- साथ इस आधार पर पूरी तरह से अमान्य माना जाता है कि आदेश पूरी तरह से मस्तिष्क का प्रयोग नहीं होने के कारण अमान्य है। इसलिए, हमारी राय है कि उक्त निर्णय को इस मामले में लागू नहीं किया जा सकता है।"

14. हम देख सकते हैं कि शंकरन मोइत्रा बनाम साधना दास एवं अन्य, [2006] 4 एससीसी 584: जेटी (2006) 4 एससी 34 में, बहुमत ने, यद्यपि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के संदर्भ में, राय दी थी।

"22. शिकायतकर्ता के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि संहिता की धारा 197(1) के तहत मंजूरी की कमी से

अदालत के आगे बढ़ने के अधिकार क्षेत्र पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, लेकिन यह आरोपी के लिए उपलब्ध बचावों में से केवल एक था और आरोपी इसे उचित समय पर बचाव के लिए उठा सकता है। हम इस निवेदन को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हैं। धारा 197(1), के शुरुआती शब्द और इसके द्वारा प्राप्त की जाने वाली वस्तु, और इस न्यायालय के पहले उद्धृत निर्णय, स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि उस प्रावधान से प्रभावित अभियोजन मंजूरी के बिना शुरू नहीं किया जा सकता है। जब यह प्रावधान आकर्षित होते हैं, तो लोक सेवक के अभियोजन के सफलता के लिए यह एक पूर्ववर्ती शर्त है। यद्यपि यह प्रश्न न सिर्फ शुरुआत में नहीं उठा सकता, लेकिन बाद के चरण में उठाये जा सकते हैं। इसलिए हम इस प्रश्न पर निर्णय स्थगित करने के अनुरोध को स्वीकार नहीं कर सकते।"

15. इस मामले में हाईकोर्ट ने मूल रिकार्ड तलब किया. यह उसमें चला गया था. यह पाया गया कि रिपोर्ट को छोड़कर, मंजूरी देने वाले प्राधिकारी के समक्ष कोई अन्य रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं कराया गया था। मंजूरी के आदेश में एफ भी कहा गया है। पीडब्लू-8 के पास भी कथित रिपोर्ट को छोड़कर अन्य रिकार्डों पर विचार करने का अवसर नहीं था।

16. इसलिए, हमारी राय है कि आक्षेपित निर्णय किसी भी कानूनी कमजोरी से ग्रस्त नहीं है, हालांकि उच्च न्यायालय द्वारा की गई कुछ टिप्पणियां, जैसा कि यहां पहले देखा गया है, सही कानूनी स्थिति नहीं बताती हैं।

अपील खारिज की जाती है.

बी.बी.बी.

अपील खारिज.

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' के जरिए अनुवादक न्यायिक अधिकारी रंजना सर्राफ, आर.जे.एस. द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के लिए सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।